ANGOORI DEVI COLLEGE OF LAW EDUCATION LAKHWATI

BULANDSHAHR

SESSION :2019-20

LLB-3rd Sem

Sub:- Professional Ethics Accountability Of Lawyears and Bar Bench Relations

Subject Code :- K-3005

Submitted To

Tapesh Chaudhary

Submitted By

....

Roll No..........

Enroll No........

UNITED SECULAR SOCIETY

CERTIFICATE

This is to certify that ....
S/D/o Mr..of
Class LLB. III Semester bearing Roll No ....has
Successfully completed his practical file (Professional ethics , Accountability of lawyers and Bar Bench Relations)
During session 2019-20 under my supervision. His/Her work is genuine.
I wish him/her all best in future.

Supervisor

Scanned by CamScanner

INDEX

क्र०	विषय	पृ० सं०
1.	भारतीय विधिज्ञ परिषद्	
	(क) संगठन	1-3
	(ख) शक्तियाँ एवं कर्तव्य	4-15
2.	वाद	16
3.	i) अन्य अवचार के लिए दण्ड देने की शक्ति	16
	ii) अपीली शक्ति	17
4.	रिट - याचिका	20-23
	(i) बन्दी प्रत्यक्षीकरण	24-26
	(ii) परमादेश	27-30
	(iii) अधिकार पृच्छा	31-32
	(iv) उत्प्रेषण	32-34
	(V) प्रतिषेध	34-35

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

भारतीय विधिज्ञ परिषद

(क) संगठन

अधिवक्ता अधिनियम की धारा 5(1) यह उपबन्ध करती है कि उन राज्यक्षेत्रों के लिए, जिन पर इस अधिनियम का विस्तार है, भारतीय विधिज्ञ परिषद् के नाम से ज्ञात एक विधिज्ञ परिषद् होगी जो निम्नलिखित सदस्यों से मिलकर बनेगी, अर्थात्-

(क) भारत का महान्यायवादी, पदेन;
(ख) भारत का महासालिसिटर, पदेन;
(ग) प्रत्येक राज्य विधिज्ञ परिषद् द्वारा, अपने सदस्यों में से निर्वाचित एक सदस्य।

अधिवक्ता अधिनियम की धारा 5(1-क) यह स्पष्ट करती है कि कोई भी व्यक्ति भारतीय विधिज्ञ परिषद् के सदस्य के रूप में निर्वाचित होने के लिए तब तक पात्र नहीं होगा जब तक उसके पास धारा 3 की उपधारा (2) के परन्तुक में विनिर्दिष्ट अर्हताएँ न हों। इसी अधिनियम की धारा 5(2) के अनुसार भारतीय विधिज्ञ परिषद् का एक अध्यक्ष तथा एक उपाध्यक्ष होगा जो उस परिषद् द्वारा ऐसी रीति से निर्वाचित किया जाएगा जो विहित की जाए।

अधिवक्ता अधिनियम की धारा 5(2क) यह स्पष्ट करती है कि अधिवक्ता अधिनियम, 1977 के प्रारम्भ के ठीक पूर्व भारतीय विधिज्ञ परिषद् के अध्यक्ष या उपाध्यक्ष का पद धारण करने वाले व्यक्ति ऐसे प्रारम्भ पर, यथास्थिति, अध्यक्ष या उपाध्यक्ष का पद धारण नहीं करेगा।

परन्तु ऐसा व्यक्ति अपने पद के कर्तव्यों का पालन तब तक करता रहेगा जब तक कि परिषद् का, यथास्थिति,

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

अध्यक्ष या उपाध्यक्ष जो अधिवक्ता (संशोधन) अधिनियम, 1977 के प्रारम्भ के पश्चात् निर्वाचित हुआ है, पदभार संभाल नहीं लेता। इस अधिनियम की धारा 5(3) यह उपबन्ध करती है कि भारतीय विधिज्ञ परिषद् के ऐसे सदस्य की, जो राज्य विधिज्ञ परिषद् द्वारा निर्वाचित किया गया हो, पदावधि –

(i) राज्य विधिज्ञ परिषद् के ऐसे सदस्य की दशा में, जो वह पद पदेन धारण करता हो, उसके निर्वाचन की तारीख से दो वर्ष होगी या उस अवधि तक होगी जिसको वह राज्य विधिज्ञ परिषद् का सदस्य न रह जाए, इनमें से जो भी अवधि पहले हो, और

(ii) किसी अन्य दशा में, उतनी अवधि के लिए होगी जितनी के लिए वह राज्य विधिज्ञ परिषद् के सदस्य के रूप में पद धारण करता हो;

परन्तु प्रत्येक ऐसा सदस्य भारतीय विधिज्ञ परिषद् के सदस्य के रूप में अपने पद पर तब तक बना रहेगा जब तक उसका उत्तराधिकारी निर्वाचित नहीं कर लिया जाता है।

अधिवक्ता अधिनियम की धारा 10-ख के अनुसार विधिज्ञ परिषद् के किसी निर्वाचित सदस्य ने अपना पद रिक्त किया है ऐसा तब समझा जाएगा जब उसके बारे में उस विधिज्ञ परिषद् द्वारा जिसका वह सदस्य है, यह घोषित किया गया हो कि वह उस परिषद् के लगातार तीन अधिवेशनों में पर्याप्त कारण के बिना अनुपस्थित रहा है या जब उसका नाम किसी कारणवश अधिवक्ताओं की

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

नामावली से हटा दिया गया हो या जब वह भारतीय विधिज्ञ परिषद् द्वारा बनाए गए किसी नियम के अधीन अन्यथा निरर्हित हो गया हो।

अधिवक्ता अधिनियम की धारा 10-क यह स्पष्ट करती है कि भारतीय विधिज्ञ परिषद् का अधिवेशन नई दिल्ली में होगा। राज्य विधिज्ञ परिषद् का अधिवेशन उसके मुख्यालय में होगा। विधिज्ञ परिषद् द्वारा गठित अनुशासन समितियों से भिन्न समितियों का अधिवेशन विधिज्ञ परिषदों के अपने-अपने मुख्यालय में होगा। प्रत्येक विधिज्ञ परिषद् तथा अनुशासन समितियों से भिन्न उसकी प्रत्येक समिति अपने अधिवेशनों में कारबार के संव्यवहार की बाबत प्रक्रिया के ऐसे नियमों का अनुपालन करेगी जो विहित किए जाएँ। अनुशासन समितियों का अधिवेशन ऐसे समय और स्थानों पर होगा तथा वे अपने अधिवेशनों में कारबार के संव्यवहार की बाबत प्रक्रिया के ऐसे नियमों का अनुपालन करेगी जो विहित किए जाएँ।

अधिवक्ता अधिनियम की धारा 15 यह उल्लिखित करती है कि विधिज्ञ परिषद् के लिए किसी सदस्य का कोई भी निर्वाचन केवल इस आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जाएगा कि उसमें मत देने के लिए हकदार किसी व्यक्ति को उसकी सम्यक् सूचना नहीं दी गई है, यदि निर्वाचन की तारीख की सूचना, कम से कम उस तारीख से तीस दिन पहले, राजपत्र में प्रकाशित कर दी गई हो।

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

(ख) भारतीय विधिज्ञ परिषद् की शक्तियाँ एवं कर्तव्य

भारतीय विधिज्ञ परिषद् एक शाश्वत उत्तराधिकार तथा सामान्य मुद्रा वाली एक निगमित निकाय है जिसे स्थावर तथा जंगम, दोनों प्रकार की सम्पत्ति अर्जित तथा धारण करने, तथा संविदा करने की शक्ति है तथा वह भारतीय विधिज्ञ परिषद् के नाम से वाद ला सकती है अथवा इसी नाम से उस पर वाद लाया जा सकता है।[1] इस अधिनियम की धारा 13 यह स्पष्ट करती है कि विधिज्ञ परिषद् या उसकी समिति द्वारा किया गया कोई भी कार्य केवल इस आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जाएगा कि, यथास्थिति, परिषद् या समिति में से कोई रिक्ति विद्यमान थी या उसके संगठन में कोई त्रुटि थी।

अधिवक्ता अधिनियम की धारा 7 के अनुसार भारतीय विधिज्ञ परिषद् के निम्नलिखित कृत्य होंगे—

(i) अधिवक्ताओं के लिए वृत्तिक आचार तथा शिष्टाचार के मानक निर्धारित करना;

(ii) अपनी अनुशासन समिति द्वारा तथा प्रत्येक राज्य विधिज्ञ परिषद् की अनुशासन समिति द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया निर्धारित करना;

(iii) अधिवक्ताओं के अधिकारों, विशेषाधिकारों तथा हितों की रक्षा करना;

(iv) विधि सुधार का उन्नयन और उसका समर्थन करना;

(v) इस अधिनियम के अधीन उत्पन्न होने वाले

1. अधिवक्ता अधिनियम, धारा 5.

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

किसी ऐसे मामले में कार्यवाही करना और उसे निपटाना, और उसे किसी राज्य विधिज्ञ परिषद् द्वारा निर्दिष्ट करना;

(vi) राज्य विधिज्ञ परिषदों का साधारण पर्यवेक्षण और उन पर नियन्त्रण करना;

(vii) विधि शिक्षा का उन्नयन करना और ऐसी शिक्षा प्रदान करने वाले भारत के विश्वविद्यालयों और राज्य विधिज्ञ परिषदों से विचार-विमर्श करके ऐसी शिक्षा के मानक निर्धारित करना;

(viii) ऐसे विश्वविद्यालयों को मान्यता देना, जिनकी विधि की उपाधि अधिवक्ता के रूप में नामांकित किए जाने के लिए अर्हता होगी और उस प्रयोजन के लिए विश्वविद्यालयों में जाना और निरीक्षण करना;

(ix) विधिक विषयों पर प्रतिष्ठित विधिशास्त्रियों द्वारा परिसंवादों का संचालन और वार्ताओं का आयोजन करना और विधिक रुचि की पत्र-पत्रिकाओं और लेख प्रकाशित करना;

(x) विहित रीति से निर्धनों को विधिक सहायता देने के लिए आयोजन करना;

(xi) भारत के बाहर प्राप्त विधि की विदेशी अर्हताओं को, इस अधिनियम के अधीन अधिवक्ता के रूप में प्रवेश पाने के प्रयोजन के लिए, पारस्परिक आधार पर मान्यता देना;

UNITEDSECULARSOCIETY

Scanned by CamScanner

(xii) विधिज्ञ परिषद् की निधियों का प्रबन्ध करना और उनका विनिधान करना;

(xiii) अपने सदस्यों के निर्वाचन की व्यवस्था करना;

(xiv) इस अधिनियम द्वारा या उसके अधीन विधिज्ञ परिषद् को प्रदत्त अन्य सभी कृत्यों का पालन करना;

(xv) पूर्वोक्त कृत्यों के निर्वहन के लिए आवश्यक अन्य सभी कार्य करना।

अधिवक्ता अधिनियम की धारा 7-क यह स्पष्ट करती है कि भारतीय विधिज्ञ परिषद् अन्तर्राष्ट्रीय विधिक निकायों जैसे कि इण्टरनेशनल बार एसोसिएशन की सदस्य बन सकेगी, अभिदान के तौर पर या अन्यथा ऐसे निकायों को, ऐसी राशियों का अभिदान कर सकेगी, जिन्हें वह ठीक समझे और किसी अन्तर्राष्ट्रीय विधि सम्मेलन या परिसंवाद में अपने प्रतिनिधियों के भाग लेने के सम्बन्ध में व्यय प्राधिकृत कर सकेगी।

अधिवक्ता अधिनियम की धारा 7(2) यह उपबन्ध करती है कि भारतीय विधिज्ञ परिषद् विहित रीति से एक या अधिक निधियों का गठन निम्नलिखित प्रयोजन के लिए, अर्थात्—

(क) निर्धन, निःशक्त या अन्य अधिवक्ताओं के लिए कल्याणकारी स्कीमों के संचालन के लिए वित्तीय सहायता देने के लिए;

(ख) इस निमित्त बनाए गए नियमों के अनुसार विधिक सहायता या सलाह देने के लिए कर सकेगी;

(ग) विधिक पुस्तकालयों का निर्माण करने के लिए।

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

भारतीय विधिज्ञ परिषद् इस उपधारा में विनिर्दिष्ट सभी प्रयोजनों या उनमें से किसी प्रयोजन के लिए अनुदान, संदान, दान या अपकृतियाँ प्राप्त कर सकेगी, जो इस उपधारा के अधीन गठित समुचित निधि या निधियों में जमा की जाएगी।

भारतीय विधिज्ञ परिषद् की महत्वपूर्ण शक्तियों एवं कृत्यों की व्याख्या निम्नलिखित रूप से की जा सकती है—

(i) अधिवक्ताओं के रूप में प्रविष्ट— अधिवक्ता अधिनियम की धारा २० यह उपबन्ध करती है कि प्रत्येक ऐसा अधिवक्ता, जो नियत दिन के ठीक पूर्व उच्चतम न्यायालय में विधि-व्यवसाय करने के लिए साधिकार हकदार था और जिसका नाम किसी राज्य नामावली में दर्ज नहीं है, किसी राज्य विधिज्ञ परिषद् की नामावली में अपना नाम दर्ज कराने का आशय विहित समय के भीतर, विहित प्ररूप में भारतीय विधिज्ञ परिषद् को प्रकट कर सकेगा और उसके प्राप्त हो जाने पर भारतीय विधिज्ञ परिषद् यह निदेश देगी कि ऐसे अधिवक्ता का नाम, किसी फीस के संदाय के बिना, उस राज्य विधिज्ञ परिषद् की नामावली में दर्ज किया जाए, और सम्बद्ध राज्य विधिज्ञ परिषद् ऐसे निदेश का अनुपालन करेगी। भारतीय विधिज्ञ परिषद् के निदेश के अनुपालन में राज्य नामावली में कोई भी प्रविष्टि धारा 17(3) के उपबन्धों के अनुसार अवधारित ज्येष्ठता के क्रम से की जाएगी। जहाँ कोई अधिवक्ता, विहित समय के भीतर अपना आशय प्रकट करने में लोप करता है वहाँ उसका नाम दिल्ली की राज्य विधिज्ञ परिषद् की नामावली में दर्ज किया जाएगा।

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

अधिवक्ता अधिनियम की धारा 19 यह स्पष्ट करती है कि प्रत्येक राज्य विधिज्ञ परिषद्, इस अधिनियम के अधीन अपने द्वारा पहली बार बनाई गई अधिवक्ताओं की नामावली की एक अधिप्रमाणित प्रति भारतीय विधिज्ञ परिषद् को भेजेगी और उसके पश्चात् नहीं, ऐसी नामावली में किए गए सभी परिवर्तन और परिवर्धन, उनके किए जाने के पश्चात् यथाशक्य शीघ्र भारतीय विधिज्ञ परिषद् को संसूचित करेगी।

इसी अधिनियम की धारा 18 यह उपबन्ध करती है कि कोई व्यक्ति, जिसका नाम किसी राज्य विधिज्ञ परिषद् की नामावली में अधिवक्ता के रूप में दर्ज है, अपना नाम उस राज्य विधिज्ञ परिषद् की नामावली में किसी अन्य राज्य विधिज्ञ परिषद् की नामावली में अन्तरित कराने के लिए, विहित रूप में भारतीय विधिज्ञ परिषद् को आवेदन कर सकेगा और ऐसे आवेदन की प्राप्ति पर भारतीय विधिज्ञ परिषद् यह निदेश देगी कि ऐसे व्यक्ति का नाम, किसी फीस के संदाय के बिना, प्रथम वर्णित राज्य विधिज्ञ परिषद् की नामावली से हटा कर उस अन्य राज्य विधिज्ञ परिषद् की नामावली में दर्ज किया जाए तथा सम्बन्ध राज्य विधिज्ञ परिषद् ऐसे निदेश का अनुपालन करेगी; परन्तु जहाँ अन्तरण के लिए ऐसा कोई आवेदन ऐसे व्यक्ति द्वारा किया गया है जिसके विरुद्ध, कोई अनुशासनिक कार्यवाही लम्बित है या जहाँ किसी अन्य कारण से भारतीय विधिज्ञ परिषद् को यह प्रतीत होता है कि अन्तरण के लिए आवेदन सद्भावपूर्वक नहीं किया गया है तथा अन्तरण नहीं किया जाना चाहिए वहाँ भारतीय विधिज्ञ परिषद् आवेदन करने वाले व्यक्ति को इस निमित्त अभ्यावेदन करने का अवसर देने के पश्चात् आवेदन नामंजूर कर सकेगी। यह स्पष्ट किया गया है कि जहाँ किसी

अधिवक्ता द्वारा किए गए आवेदन पर, उसका नाम एक राज्य विधिज्ञ परिषद् की नामावली से किसी अन्य राज्य की नामावली में अन्तरित किया जाता है, वहाँ उस पश्चात्कथित नामावली में उसकी वही ज्येष्ठता बनी रहेगी जिसका वह पूर्ववर्ती नामावली में हकदार था।

(ii) समिति तथा कर्मचारीवृन्द की नियुक्ति- अधिवक्ता अधिनियम की धारा 9 भारतीय विधिज्ञ परिषद् को यह शक्ति प्रदान करती है कि वह एक या अधिक अनुशासन समितियों का गठन करेगी। प्रत्येक ऐसी समिति तीन व्यक्तियों से मिलकर बनेगी। इनमें से दो व्यक्ति परिषद् द्वारा अपने सदस्यों में से निर्वाचित होंगे और तीसरा सदस्य परिषद् द्वारा ऐसे अधिवक्ताओं में से सहयोजित व्यक्ति होगा जिसके पास धारा 3(2) के परन्तुक में विनिर्दिष्ट अर्हताएँ हों और जो परिषद् का सदस्य न हो। किसी अनुशासन समिति में से ज्येष्ठतम अधिवक्ता उसका अध्यक्ष होगा।

अधिवक्ता अधिनियम की धारा 9 (क) भारतीय विधिज्ञ परिषद् को एक या अधिक विधिक सहायता समिति गठित करने की शक्ति प्रदान करती है। ऐसी प्रत्येक समिति में अधिक से अधिक नौ और कम से कम पाँच ऐसे सदस्य होंगे जो विहित किए जाएँ। विधिक सहायता समिति के सदस्यों की अर्हताएँ, उनके चयन की पद्धति और उनकी पदावधि वह होगी जो विहित की जाएँ।

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

इसके अतिरिक्त, अधिवक्ता अधिनियम की धारा 10(2) के अनुसार भारतीय विधिज्ञ परिषद् निम्नलिखित स्थायी समितियों का गठन करेगी, अर्थात्-

(क) एक कार्यकारिणी समिति, जो परिषद् द्वारा अपने सदस्यों में से निर्वाचित नौ सदस्य से मिलकर बनेगी;

(ख) एक विधि शिक्षा समिति जो दस सदस्यों से मिलकर बनेगी। इसमें पाँच सदस्य परिषद् द्वारा अपने सदस्यों में से निर्वाचित व्यक्ति होंगे तथा पाँच सदस्य परिषद् द्वारा सहयोजित ऐसे व्यक्ति होंगे जो उसके सदस्य नहीं है।

अधिवक्ता अधिनियम की धारा 11 के अनुसार भारतीय विधिज्ञ परिषद् एक सचिव नियुक्त करेगी। इसके साथ ही वह भारतीय विधिज्ञ परिषद् को एक लेखपाल तथा ऐसे अन्य व्यक्तियों को अपने कर्मचारीवृन्द के रूप में नियुक्त करने की शक्ति देती है जिन्हें वह आवश्यक समझे। सचिव तथा लेखपाल की, यदि कोई हो, अर्हताएँ वे होंगी जो विहित की जाएँ।

UNITEDSECULAR SOCIETY

(iii) लेखा, इत्यादि की तैयारी एवं व्यवस्था-

अधिवक्ता अधिनियम की धारा 12 यह उपबन्ध करती है कि भारतीय विधिज्ञ परिषद् ऐसी लेखा बहियाँ तथा अन्य बहियाँ ऐसे प्ररूप में और ऐसी रीति से रखवाएगी जो विहित की जाए। भारतीय विधिज्ञ परिषद् के लेखाओं की लेखापरीक्षा, कम्पनी अधिनियम, 1956 के अधीन कम्पनियों के लेखापरीक्षकों के रूप में कार्य करने के लिए सम्यक् रूप से अर्हित लेखापरीक्षकों द्वारा, ऐसे समयों पर और ऐसी रीति से की जाएगी, जो विहित किए जाएँ या की जाए। धारा 12 की उपधारा (3) यह स्पष्ट करती है कि प्रत्येक वित्तीय

Scanned by CamScanner

वर्ष की समाप्ति पर, यथासाध्य शीघ्रता से, किन्तु ठीक अगले वर्ष के दिसम्बर के 31वें दिन के पश्चात् नहीं, राज्य विधिज्ञ परिषद् अपनी लेखाओं की एक प्रति केन्द्रीय सरकार को भेजेगी तथा उसे भारत के राजपत्र में प्रकाशित करवाएगी

(iv) नियम बनाने की शक्ति – भारतीय विधिज्ञ परिषद् अधिवक्ता अधिनियम की धारा 15 के प्रयोजनों के अन्तर्गत नियम बनाने की शक्ति रखती है। धारा 15 की उपधारा (2) यह उपबन्ध करती है कि विशिष्टतया तथा पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियम निम्नलिखित उपबन्ध कर सकेंगे –

(क) विधिज्ञ परिषद् के सदस्यों का गुप्त मतदान द्वारा निर्वाचन, जिनके अन्तर्गत वे शर्तें भी हैं जिनके अधीन रहते हुए व्यक्ति डाक मतपत्र द्वारा मतदान के अधिकार का प्रयोग कर सकते हैं, निर्वाचक नामावलियाँ तैयार करना और उनका पुनरीक्षण और वह रीति जिससे निर्वाचन के परिणाम प्रकाशित किए जाएँगे;

(ख) विधिज्ञ परिषद् के अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष के निर्वाचन की रीति;

(ग) वह रीति, जिससे, और वह प्राधिकारी जिसके द्वारा विधिज्ञ परिषद् के लिए या अध्यक्ष या उपाध्यक्ष के पद के लिए किसी निर्वाचन की विधि मान्यता के बारे में शंकाओं तथा विवादों का अन्तिम रूप से विनिश्चय किया जाएगा;

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

(घ) विधिज्ञ परिषद् में आकस्मिक रिक्तियों का भरना;

(ङ) विधिज्ञ परिषद् के अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष की शक्तियाँ तथा कर्त्तव्य

(च) धारा 6(2) तथा धारा 7(2) में विनिर्दिष्ट वित्तीय सहायता देने या विधिक सहायता या सलाह देने के प्रयोजन के लिए विधिज्ञ परिषद् द्वारा एक या अधिक विधियों का गठन,

(छ) निर्धनों के लिए विधिक सहायता तथा सलाह देने के लिए आयोजन, और उस प्रयोजनों के लिए समितियों और उपसमितियों का गठन और उनके कृत्य तथा उन कार्यवाहियों का विवरण जिनके सम्बन्ध में विधिक सहायता या सलाह दी जा सकती है।

(ज) विधिज्ञ परिषद् के अधिवेशन बुलाना और उनका आयोजन, उनमें कारबार का संचालन और उनमें गणपूर्ति के लिए आवश्यक सदस्य संख्या;

(झ) विधिज्ञ परिषद् के किसी समिति का गठन और उसके कृत्य और किसी ऐसी समिति के सदस्यों की पदावधि;

(ञ) ऐसी किसी समिति के अधिवेशन बुलाना और उनका आयोजन, उनमें कारबार के संव्यवहार एवं गणपूर्ति के लिए आवश्यक सदस्य संख्या;

(ट) विधिज्ञ परिषद् के सचिव, लेखपाल तथा अन्य कर्मचारियों की अर्हताएँ और उनकी सेवा की शर्तें;

(ठ) विधिज्ञ परिषद् द्वारा लेखा बहियों तथा अन्य पुस्तकों का रखा जाना;

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

(ङ) लेखापरीक्षकों की नियुक्ति और विधिज्ञ परिषद् के लेखाओं की लेखापरीक्षा;

(ढ) विधिज्ञ परिषद् की निधियों का प्रबन्ध और विनिधान।

धारा 15(3) यह स्पष्ट कर देती है कि किसी राज्य विधिज्ञ परिषद् द्वारा इस धारा के अधीन बनाए गए नियम तब तक प्रभावी नहीं होंगे जब तक भारतीय विधिज्ञ परिषद् उसका अनुमोदन न कर दे।

अधिवक्ता अधिनियम की धारा 49 भारतीय विधिज्ञ परिषद् को नियम बनाने के लिए सामान्य शक्ति प्रदान करती है। भारतीय विधिज्ञ परिषद् इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों के निर्वहन के लिए नियम बना सकेगी और विशिष्टतया ऐसे नियम निम्नलिखित विहित कर सकेंगे, अर्थात्—

(क) वे शर्तें, जिनके अधीन रहते हुए कोई अधिवक्ता राज्य विधिज्ञ परिषद् के किसी निर्वाचन में मतदान करने के लिए हकदार हो सकेगा जिनके अन्तर्गत मतदाताओं की अर्हताएँ या निरर्हताएँ भी हैं और वह रीति, जिससे मतदाताओं की निर्वाचक नामावली राज्य विधिज्ञ परिषद् द्वारा तैयार और पुनरीक्षित की जा सकेगी;

(ख) किसी विधिज्ञ परिषद् की सदस्यता के लिए अर्हताएँ और ऐसी सदस्यता के लिए निरर्हताएँ;

(ग) वह समय, जिसके भीतर और वह रीति जिससे धारा 3(2) के परन्तुकों को प्रभावी किया जा सकेगा;

(घ) वह रीति जिससे किसी अधिवक्ता के नाम को एक से अधिक राज्यों की नामावली में दर्ज किए जाने से रोका जा सकेगा;

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

(ङ) वह रीति जिससे अधिवक्ताओं की परस्पर ज्येष्ठता अवधारित की जा सकेगी;

(च) किसी मान्यताप्राप्त विश्वविद्यालय में, विधि की उपाधि के पाठ्यक्रम में प्रवेश पाने के लिए अपेक्षित न्यूनतम अर्हताएँ;

(छ) अधिवक्ताओं के रूप में नामांकित किए जाने के लिए हकदार व्यक्तियों का वर्ग या प्रवर्ग;

(ज) वे शर्तें जिनके अधीन रहते हुए किसी अधिवक्ता को विधि-व्यवसाय करने का अधिकार होगा और वे परिस्थितियाँ जिनमें किसी व्यक्ति के बारे में यह समझा जाएगा कि वह किसी न्यायालय में विधि-व्यवसाय करता है;

(झ) वह प्ररूप जिसमें एक राज्य की नामावली से दूसरे में किसी अधिवक्ता के नाम के अन्तरण के लिए आवेदन किया जाएगा;

(ञ) अधिवक्ताओं द्वारा अनुपालन किए जाने वाले वृत्तिक आचरण और शिष्टाचार के मानक;

(ट) भारत में विश्वविद्यालयों द्वारा अनुपालन किये जाने वाला विधि शिक्षा का स्तर और उस प्रयोजन के लिए विश्वविद्यालयों का निरीक्षण;

(ठ) भारत के नागरिकों से भिन्न व्यक्तियों द्वारा विधि विषय में प्राप्त ऐसी विदेशी अर्हताएँ, जिन्हें इस अधिनियम के अधीन अधिवक्ता के रूप में प्रवेश पाने के प्रयोजन के लिए मान्यता दी जाएगी;

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

(ड) किसी राज्य विधिज्ञ परिषद् की अनुशासन समिति द्वारा अनुसरित की जाने वाली प्रक्रिया;

(ढ) विधि-व्यवसाय के मामले में वे निर्बन्धन जिनके अधीन वरिष्ठ अधिवक्ता होंगे;

(ण) जलवायु को ध्यान में रखते हुए; किसी न्यायालय या अधिकरण के समक्ष हाजिर होने वाले अधिवक्ताओं द्वारा, पहनी जाने वाली पोशाकें या परिधान;

(त) इस अधिनियम के अधीन किसी मामले की बाबत उद्गृहीत की जा सकने वाली फीस;

(थ) राज्य विधिज्ञ परिषदों के मार्गदर्शन के लिए साधारण सिद्धान्त और वह रीति जिससे भारतीय विधिज्ञ परिषद् द्वारा जारी किए गए निदेशों या दिए गए आदेशों को प्रवर्तित किया जा सकेगा;

(द) कोई अन्य बात, जो विहित की जाए।

यह स्पष्ट किया गया है कि अधिवक्ताओं द्वारा अनुपालन किए जाने वाले वृत्तिक आचरण तथा शिष्टाचार के मानक तथा अधिवक्ताओं द्वारा, जलवायु को ध्यान में रखते हुए, पहनी जाने वाली पोशाक के सम्बन्ध में बनाए गए नियम तब तक प्रभावी नहीं होंगे जब तक कि भारत के मुख्य न्यायाधिपति द्वारा अनुमोदित न कर दिए गए हों। फिर भी, ऐसे विषयों के सम्बन्ध में बनाए गए नियम जो अधिवक्ता (संशोधन) अधिनियम,

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

1973 के प्रारम्भ के ठीक पूर्व प्रवृत्त थे तब तक प्रभावी बने रहेंगे जब तक वे इस अधिनियम के उपबन्धों के अनुसार या परिवर्तित निरसित या संशोधित नहीं कर दिए जाते।

इण्डियन कौंसिल ऑफ लीगल एड बनाम बार कौंसिल ऑफ इण्डिया[1] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने यह मत प्रकट किया है कि किसी ऐसी व्यक्ति को, जिसकी आयु 45 वर्ष से अधिक हो, अधिवक्ता के रूप में नामांकन से रोकने वाला नियम मनमाना, अनुचित तथा भारतीय विधिज्ञ परिषद् के क्षेत्राधिकार अथवा शक्ति के परे है और शून्य है।

वी० सुदीर बनाम बार कौंसिल ऑफ इण्डिया[2] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट कर दिया है कि अधिवक्ता के रूप में नामांकित होने के पूर्व प्रशिक्षण और अप्रेन्टिसशिप का नियम भारतीय विधिज्ञ परिषद् की नियम बनाने की शक्ति से परे है और इस प्रकार अधिकारातीत है और शून्य है।

(V) वृत्तिक (या व्यवसायिक) अथवा अन्य अवचार के <u>लिए दण्ड देने की शक्ति</u> – अधिवक्ता अधिनियम की धारा 36 भारतीय विधिज्ञ परिषद् को यह शक्ति प्रदान करती है कि वह किसी अधिवक्ता को उसके द्वारा किए गए वृत्तिक अथवा अन्य अवचार के लिए दण्डित कर सकती है। इस धारा के अनुसार जहाँ किसी शिकायत की प्राप्ति पर या अन्यथा, भारतीय विधिज्ञ परिषद् के पास यह विश्वास करने का कारण है कि

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

कोई ऐसा अधिवक्ता जिसका नाम किसी राज्य नामावली में दर्ज नहीं है, वृत्तिक या अन्य अवचार का दोषी रहा है, वहाँ उस मामले को अपनी अनुशासन समिति को निपटारे के लिए, निर्दिष्ट करेगी।

(vi) अपीली शक्ति— अधिवक्ता अधिनियम की धारा 37 भारतीय विधिज्ञ परिषद् को यह शक्ति प्रदान करती है कि वह इस अधिनियम की धारा 35 के अन्तर्गत दिए गए राज्य विधिज्ञ परिषद् की अनुशासन समिति के आदेशों के विरुद्ध की गई अपील को सुन सकती है। इसके अनुसार किसी राज्य विधिज्ञ परिषद् की अनुशासन समिति की धारा 35 के अधीन दिए गए आदेश या राज्य के महाधिवक्ता के आदेश से व्यथित व्यक्ति, आदेश की संसूचना की तारीख से साठ दिनों के भीतर, भारतीय विधिज्ञ परिषद् को अपील कर सकेगा। प्रत्येक ऐसी अपील की सुनवाई भारतीय विधिज्ञ परिषद् की अनुशासन समिति द्वारा की जाएगी और वह समिति उस पर ऐसा आदेश जिसके अन्तर्गत राज्य विधिज्ञ परिषद् की अनुशासन समिति द्वारा अधिनिर्णीत दण्ड को परिवर्तित करने का आदेश भी है पारित कर सकेगी, जैसा कि वह ठीक समझे। परन्तु भारतीय विधिज्ञ परिषद् की

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

अनुशासन समिति द्वारा इस प्रकार परिवर्तित नहीं किया जाएगा जिससे कि उस व्यक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े।

एक वाद[1] में उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया है अधिवक्ता पर अनुशासनात्मक अधिकारिता, यद्यपि कि विधिज्ञ परिषदों में निहित है परन्तु धारा 38 के परिणामस्वरूप इस सम्बन्ध में अन्तिम प्राधिकारी उच्चतम न्यायालय है।

(Vii) अन्य शक्तियाँ एवं कृत्य – (I) भारतीय विधिज्ञ परिषद्, का यह समाधान हो जाता है कि किसी राज्य विधिज्ञ परिषद् को इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों का पालन करने के प्रयोजन के लिए निधि की आवश्यकता है तो वह अनुदान के रूप में या अन्यथा, उस विधिज्ञ परिषद् को ऐसी वित्तीय सहायता दे सकेगी, जैसा कि वह ठीक समझे।[2]

(II) जहाँ केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त राजपत्र में अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट कोई देश, भारत के नागरिकों को विधि – व्यवसाय करने से रोकता है या उस राज्य में उनके प्रति अनुचित भेदभाव करता है, वहाँ ऐसे किसी देश की कोई भी प्रजा भारत में विधि – व्यवसाय करने की हकदार नहीं होगी। इस अधिनियम के अधीन अधिवक्ता के रूप में प्रवेश के प्रयोजन के लिए, मान्यता दी जाएगी।[3]

---

1. हरीश उप्पल बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया, 2003 AIR SCW 43.
2. अधिवक्ता अधिनियम, धारा 46-क
3. अधिवक्ता अधिनियम, धारा 47.

UNITEDSECULARSOCIETY

Scanned by CamScanner

(III) भारतीय विधिज्ञ परिषद् या उसकी अनुशासन समिति से भिन्न उसकी समितियों में से कोई भी समिति इस अधिनियम के अधीन अपने द्वारा पारित आदेश का, उस आदेश की तारीख से साठ दिनों के भीतर, स्वप्रेरणा से या अन्यथा पुनर्विलोकन कर सकेगी।

एक वाद में[4] उच्चतम न्यायालय ने यह स्पष्ट कर दिया है कि जहाँ तक पुनर्विलोकन याचिका दाखिल करने के निमित्त परिसीमा अवधि के प्रारम्भ होने का सम्बन्ध है, धारा 48-क में उल्लिखित पद "उस आदेश की तिथि" का अर्थ याचिकाकर्ता को आदेश की सूचना देने या जानकारी की तिथि से है।

(IV) धारा 48 यह उपबन्ध करती है कि इस अधिनियम या उसके अधीन बनाए गए किन्हीं नियमों के उपबन्धों के अनुसरण में सद्भावपूर्वक किए गए या किए जाने वाले आशयित किसी कार्य के लिए कोई भी वाद या अन्य विधिक कार्यवाही किसी विधिज्ञ परिषद् या उसकी किसी समिति के या विधिज्ञ परिषद् के या उसकी किसी समिति के सदस्य के विरुद्ध नहीं होगी।

---

4. डॉ० साईबाबा बनाम बार कौंसिल ऑफ इण्डिया AIR 2003

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

रिट - याचिका

रिट - याचिका तात्कालिक उपचार प्राप्त करने का एक महत्वपूर्ण तरीका है। प्रतिदिन मामलों में अनेकों रिट याचिकाएँ प्रस्तुत की जाती हैं। जो अधिवक्ता रिट याचिकाओं में सफलता प्राप्त करता है वह मुवक्किलों के मध्य लोकप्रिय हो जाता है और इससे सफल अधिवक्ता बनने में उसे महत्वपूर्ण सहायता प्राप्त होती है। रिट याचिका तैयार करने की विधि का ज्ञान सफलता प्राप्त करने में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करता है।

रिट याचिका प्रस्तुत करने और उसकी पैरवी करने के निमित्त भारत के संविधान के उपबन्धों का विशेष रूप से अनु० ३२ और २२६ का ज्ञान आवश्यक है। इसके साथ ही इन अनुच्छेदों के अन्तर्गत जिन रिटों को जारी किया जा सकता है उनके जारी किए जाने की शर्तों का ज्ञान भी होना आवश्यक है।

संवैधानिक उपबन्ध

भारत के संविधान में रिट याचिका सम्बन्धी महत्वपूर्ण उपबन्धों का वर्णन निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है -

अनुच्छेद ३२- अनुच्छेद ३२ संविधान के भाग ३ द्वारा प्रदत्त मूल अधिकारों को प्रवर्तित कराने के उपचार के सम्बन्ध

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

में उपबन्ध करता है। अनु० 32 के उपबन्ध इस प्रकार हैं-

अनुच्छेद 32(1) मूल अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए उच्चतम न्यायालय में समावेदन करने का अधिकार प्रत्याभूत करता है। अतः मूल अधिकारों के उल्लंघन होने पर उच्चतम न्यायालय को प्रचालित करने का मूल अधिकार प्राप्त है। उच्चतम न्यायालय को मूल-अधिकारों का संरक्षक बनाया गया है।[1]

अनुच्छेद 32 अत्यन्त महत्वपूर्ण अनु० है। अनु० 32 के अन्तर्गत उच्चतम न्यायालय को केवल मूल अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए ही प्रचालित किया जा सकता है, किसी अन्य अधिकार को प्रवर्तित कराने के लिए प्रचालित नहीं किया जा सकता। अतः अनु० 32 के अन्तर्गत उच्चतम न्यायालय को केवल मूल अधिकारों के प्रवर्तन हेतु ही अधिकारिता प्राप्त है, अन्य अधिकारों के प्रवर्तन हेतु नहीं। यदि किसी मूल अधिकार का उल्लंघन नहीं हुआ है तो अनु० 32 के अन्तर्गत आवेदन नहीं दिया जा सकता।[1] अनु० 32 के अन्तर्गत की कार्यवाही में केवल मूल अधिकारों से सम्बन्धित प्रश्न ही विनिश्चित किए जा सकते हैं, अन्य नहीं।[2]

रुदल शाह बनाम स्टेट ऑफ बिहार[3] के वाद में सक्षम न्यायालय द्वारा पिटिशनर को छोड़ दिए जाने के आदेश के उपरान्त भी उसे 14 वर्ष तक कारावास में रखा गया। न्यायालय ने राज्य को आदेश दिया कि पिटिशनर को 30,000 रु० प्रतिकर के रूप में दें।

---

1. गोपाल दास बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया, AIR 1955, SC 1.
2. पूनम बनाम सुमित तन्वर, AIR 2010, SC 1384.
3. AIR 1983, SC 1086.

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

एम० सी० मेहता बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया[1] के वाद में कारखाना से निकलने वाले मलबे से गंगा का पानी प्रदूषित हो रहा था जो जनजीवन के लिए हानिकारक था। न्यायालय ने इसे तुरन्त बन्द करने का आदेश दिया।

कैलाश चन्द्र शर्मा बनाम स्टेट ऑफ राजस्थान[2] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया है कि राज्य का नीतिगत निर्णय भी अनु० 14 और 16 की कसौटी पर सही होना चाहिए। इसे मनमाना नहीं होना चाहिए।

निम्नलिखित दशाओं में उच्चतम न्यायालय उपचार देने से इन्कार कर सकता है—

1. पूर्व न्याय
2. अतिविलम्ब
3. दुर्भावपूर्ण याचिका
4. फलहीन याचिका
5. पर्याप्त वैकल्पिक उपचार

अनुच्छेद 226 — अनु० 226 उच्च न्यायालय को रिट जारी करने की शक्ति प्रदान करता है। अनु० 226 के उपबन्ध इस प्रकार हैं—

1. किसी सरकार, प्राधिकारी या व्यक्ति को निदेश, आदेश या रिट निकालने को खण्ड (1) द्वारा प्रदत्त शक्ति का प्रयोग उन राज्यक्षेत्रों के सम्बन्ध में; जिनके भीतर ऐसी शक्ति के प्रयोग के लिए वाद हेतुक; उत्पन्न होता है।

---

1. AIR 1988, SCC 471.
2. AIR 2002, SC 2877.

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

(2) अनु० 226 के अन्तर्गत उच्च न्यायालय को जो अधिकारिता प्राप्त है उसे बिना संविधान का संशोधन लिए केवल विधि बना कर न्यून या समाप्त नहीं किया जा सकता।[1]

(3) इस अनु० के अन्तर्गत उच्च न्यायालय द्वारा कोई विधि घोषित की जाती है तो वह इसके अधीनस्थ समस्त न्यायालयों एवं अधिकरणों पर बन्धनकारी होगा।[2]

(4) एक वाद में[3] उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट कर दिया है कि अनु० 226 के अन्तर्गत अधिकारिता के प्रयोग में पारित आदेश के कारण को अभिलिखित करना आवश्यक है।

UNITED SECULAR SOCIETY

1. प्रेम सागर बनाम स्टैण्डर्ड आयल कं० (1964)
2. ई० एल० कामर्शियल कं० बनाम कलेक्टर ऑफ कस्टम, AIR 1962.
3. वासुदेव विश्वनाथ बनाम न्यू एजुकेशन इन्स्टीट्यूट, AIR 1986

Scanned by CamScanner

रिट

उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालय जिन रिटों को जारी कर सकते हैं, उनकी विवेचना नीचे दी गई है-

1. बन्दी प्रत्यक्षीकरण

बन्दी प्रत्यक्षीकरण का अर्थ है, बन्दी को न्यायालय के समक्ष उपस्थित करना। यह रिट निरुद्ध व्यक्ति के निरोध की विधिमान्यता के परीक्षण हेतु न्यायालय के समक्ष निरुद्ध व्यक्ति को प्रस्तुत करने के निमित्त निरुद्ध करने वाले व्यक्ति को आदेश के रूप में जारी किया जाता है अर्थात् किसी व्यक्ति को निरुद्ध करने वाले व्यक्ति को न्यायालय यह आदेश देता है कि वह निरुद्ध व्यक्ति के निरोध की विधिमान्यता के परीक्षण हेतु उसे न्यायालय के समक्ष उपस्थित करे। यदि न्यायालय यह पाता है कि निरोध विधिमान्य नहीं है तो वह आदेश दे सकता है कि निरुद्ध व्यक्ति को छोड़ दिया जाय। इस रिट का उद्देश्य है अवैध रूप से निरुद्ध व्यक्ति को तुरन्त रिहा करना। इस रिट का उद्देश्य निरुद्ध करने वाले व्यक्ति को दण्ड देना नहीं बल्कि कारागार अथवा व्यक्तिगत अभिरक्षा या हिरासत में अवैध रूप से रखे व्यक्ति को रिहा कराना है।[1] यह निरुद्ध व्यक्ति को तुरन्त उपचार प्रदान करता है। सामान्य नियम यह है कि जिस व्यक्ति के अधिकार का उल्लंघन हुआ है वह रिट जारी करने की प्रार्थना के लिए याचिका प्रस्तुत कर सकता है।

---

1. वेंकटारमन, इन रि., (1950)

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

यदि मूल अधिकार का उल्लंघन हुआ है तो याचिका अनुच्छेद 32 के अन्तर्गत उच्चतम न्यायालय के समक्ष और अनुच्छेद 226 के अन्तर्गत उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जा सकता है। परन्तु बंदी प्रत्यक्षीकरण की रिट के लिए याचिका पीड़ित व्यक्ति के अतिरिक्त कोई अन्य व्यक्ति जैसे निरुद्ध व्यक्ति का मित्र, सम्बन्धी अथवा सामाजिक कार्यकर्त्ता द्वारा भी प्रस्तुत किया जा सकती है।[2.] लोकहित वाद के सिद्धान्त के विकास के बाद स्थिति यह है कि यदि निरुद्ध व्यक्ति अज्ञानता, गरीबी अथवा किसी अन्य कारण से उपचार के लिए न्यायालय में जाने में असमर्थ है तो समाज का कोई भी व्यक्ति या संघ या निकाय सद्भावपूर्वक कार्य करते हुए उस व्यक्ति को उपचार दिलवाने के लिए याचिका प्रस्तुत कर सकता है।[3]

निम्नलिखित शर्तों की पूर्ति पर यह रिट जारी की जाती है-

<u>(1) निरोध अवैध है-</u> निरोध को उस दशा में अवैध मानते हैं जबकि निरोध किसी व्यक्ति द्वारा समर्थित नहीं है अथवा ऐसे विधि के अन्तर्गत निरोध किया गया है जो संवैधानिक अथवा निरोध संवैधानिक और विधिमान्य विधि के अन्तर्गत किया गया है परन्तु विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसरण में नहीं किया गया है अर्थात् विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया का बिना पालन किए ही निरोध किया गया है। अनुच्छेद 22 के अबन्धों के उल्लंघन में किया गया निरोध अवैध माना जाता है और ऐसी स्थिति में यह रिट जारी की जा सकती है।

---

2. कमला देवी बनाम स्टेट ऑफ पंजाब, (1985) SCC 41.
3. एस॰पी॰ गुप्ता बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया AIR 1982. SC 149.

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

अतः निरुद्ध किए जाने के 24 घण्टे के अन्दर निरुद्ध व्यक्ति को मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया जाता है तो उस व्यक्ति का निरोध अवैध हो जाएगा और ऐसा दशा में यह रिट जारी की जा सकती है।

(2) याचिका की सुनवाई पर निरोध विद्यमान होना चाहिए— रिट जारी करते समय निरोध अस्तित्व में होना चाहिए। यदि याचिका दाखिल करते समय निरोध विद्यमान हैं परन्तु जब याचिका लम्बित है, निरुद्ध व्यक्ति को रिहा कर दिया जाता है, तो याचिका व्यर्थ या फलहीन होने के आधार पर खारिज कर दी जाएगी।[1]

पूर्वन्याय— बन्दी प्रत्यक्षीकरण की रिट के सम्बन्ध में पूर्वन्याय का सिद्धान्त लागू नहीं होता है।[2]

निरुद्ध व्यक्ति को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करना आवश्यक नहीं— उच्चतम न्यायालय[3] ने निर्णय दिया है कि बन्दी प्रत्यक्षीकरण रिट जारी करने की प्रार्थना करने के निमित्त दाखिल याचिका की सुनवाई और उसका निपटारा करने के लिये निरुद्ध व्यक्ति को न्यायालय के समक्ष उपस्थित करना आवश्यक नहीं है। इस रिट का मुख्य उद्देश्य निरुद्ध व्यक्ति की वैधता और अवैधता की जाँच करना है और इस निमित्त निरुद्ध व्यक्ति को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाना आवश्यक नहीं है।

1. मोहित लाल बनाम डी॰ एम॰, AIR 1974 SC 2237.
2. लालूभाई जोगीभाई बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया, AIR 1981 SC 728
3. कानू सन्याल बनाम डी॰एम॰ AIR 1983 SC 653.

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

II परमादेश

परमादेश रिट उच्चतर या वरिष्ठ न्यायालय द्वारा सरकार, अवर या अधीनस्थ न्यायालय, अधिकरण, लोक प्राधिकारी, निगम अथवा लोक कर्तव्य का विचारण करने वाले अन्य व्यक्ति को अपने लोक कर्तव्य का निष्पादन करने के आदेश के रूप में जारी किया जाता है। उदाहरण के लिए यदि किसी अधिकरण के आदेश का कार्यान्वयन सरकार द्वारा नहीं किया जाता है तो न्यायालय परमादेश रिट जारी करके सरकार को आदेश दे सकता है कि वह अधिकरण के आदेश को कार्यान्वित करके अपने विधि कर्तव्य का पालन करे।[1]

इस रिट का मुख्य उद्देश्य है, संविधि द्वारा विहित लोक कर्तव्यों का पालन करना और अधीनस्थ न्यायालय, अधिकरण और लोक कर्तव्य को सम्पादन करने वाले अधिकारियों को अपनी अधिकारिता या अपने अधिकार-क्षेत्र की सीमा के भीतर रखना।[2] यह रिट लोक कर्तव्य का पालन सुनिश्चित करने हेतु जारी की जाती है।[3] एक मामले में[4] उच्च न्यायालय ने याचिका दाता को नीलामी में सबसे ऊँची बोली लगाने वाला माने जाने के लिए और उसे ठेका देने के लिए उच्च न्यायालय ने सरकार के विरुद्ध रिट जारी किया। उच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि उच्च न्यायालय इस बात का आदेश तो दे सकता था कि याचिकादाता को सर्वोच्च बोली लगाने वाला व्यक्ति समझा जाय परन्तु इस बात का आदेश देने की शक्ति प्राप्त नहीं थी कि उसे ठेका दिया जाए

1. शरीफ अहमद बनाम आर० टी० ए० मेरठ, AIR 1978, SC 209.
2. लेखराज बनाम डिप्टी कस्टोडियन बम्बई, AIR 1966, SC 334.
3. महेन्द्र नाथ बनाम यू० पी० स्टेट AIR 1992, SC 566.

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

इस रिट के जारी करने के लिए निम्नलिखित शर्तों की पूर्ति होनी आवश्यक है-

(1) लोक-कर्त्तव्य- यदि व्यक्ति या प्राधिकारी के विरुद्ध इस रिट को जारी किए जाने की प्रार्थना की गई है तो उसे अवश्य ही लोक-कर्त्तव्य का पालन या निष्पादन करना हो और उसने ऐसे कर्त्तव्य के पालन या निष्पादन में चूक किया हो अथवा ऐसे कर्त्तव्य के पालन में विफल हुआ हो। कर्त्तव्य उस समय लोक-कर्त्तव्य माना जाता है जबकि वह संविधान या संविधि या कॉमन लॉ के नियम से उत्पन्न होता है। अतः जो कर्त्तव्य संविधान या कॉमन लॉ या विधि का बल रखने वाले नियम या आदेश से आरोपित किया जाता है उसे लोक कर्त्तव्य माना जाता है।[1] परमादेश को ऐसे ही लोक-कर्त्तव्य को प्रवर्तित कराने के निमित्त जारी किया जाता है।[2] इसे प्राइवेट कर्त्तव्य को प्रवर्तित कराने के निमित्त जारी नहीं किया जाता है। अतः संविदा से उत्पन्न आभार को प्रवर्तित कराने के निमित्त यह जारी नहीं किया जाता है। यह उल्लेखनीय है कि इस रिट को जारी करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि जिसके विरुद्ध यह जारी की जाती है वह लोक प्राधिकार ही हो। इसे प्राइवेट व्यक्ति के विरुद्ध भी जारी किया जा सकता है। यदि उस पर आरोपित कर्त्तव्य लोक-कर्त्तव्य है।[2]

---

1. गुरुस्वामी बनाम स्टेट ऑफ मैसूर, AIR 1954, SC 592.

2. प्राग टूल्स कारपोरेशन बनाम इमानुएल, AIR 1969, SC 1306

Scanned by CamScanner

(२) <u>आज्ञापक कर्त्तव्य</u> – जिस व्यक्ति के विरुद्ध इस रिट को जारी किया जाना है वह कोई लोक-कर्तव्य का निष्पादन करने के लिए बाध्य होना चाहिए। उस व्यक्ति या प्राधिकारी पर कोई लोक-कर्त्तव्य का पालन आरोपित होना चाहिए और उस कर्त्तव्य का उसके द्वारा पालन किया जाना आज्ञापक होना चाहिए। उदाहरण के लिए यदि किसी नियम द्वारा सरकार को अपने कर्मचारियों को मँहगाई भत्ता देने का वैवेकिक अधिकार प्रदान किया जाता है तो ऐसी स्थिति में मँहगाई भत्ता अनुज्ञात कराने के लिए सरकार को विवश हेतु इस रिट को जारी नहीं किया जा सकता[1] परन्तु यदि इसका प्रयोग दुराशय से या मनमाने ढंग से या बिना मस्तिष्क के प्रयोग के[2] या अनावश्यक बातों पर विचार करके[3] किया जाता है तो परमादेश रिट को जारी किया जा सकता है। यदि कोई प्राधिकारी इस कर्तव्य के अधीन है कि अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करे परन्तु वह ऐसा नहीं करता है तो परमादेश रिट जारी करके प्राधिकारी को, विधि के अनुसार कार्य करने और अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करने, का आदेश दिया जा सकता है।[4]

सेवा विनियमित करने के लिए उस दशा में इस रिट को जारी नहीं किया जा सकता है जबकि नियुक्ति संविधान अथवा संविधि के आज्ञापक उपबन्धों के उल्लंघन में की गई है।

---

1. स्टेट ऑफ एम० पी० बनाम मन्दावर, AIR 1954, SC493.
2. स्टेट ऑफ पंजाब बनाम हरिकृष्ण, AIR 1966, SC 1081.
3. ईरानी बनाम स्टेट ऑफ मद्रास, AIR 1961, SC 1731.
4. कमिश्नर ऑफ पुलिस बनाम गोरधन दास, AIR 1952, SC16.

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

(3) कर्त्तव्य पालन को विवश करने का विधिक अधिकार- इस रिट को जारी करने के निमित्त यह भी आवश्यक है कि जिस व्यक्ति, प्राधिकारी, सरकार इत्यादि के विरुद्ध इसे जारी करने की प्रार्थना की गई है उस व्यक्ति को अपने लोक-कर्त्तव्य के पालन के लिए विवश करने का विधिक अधिकार याचिकादाता को प्राप्त हो।

एक वाद में[1] उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट कर दिया है कि याचिकाकर्त्ता को लोक कर्त्तव्य का पालन कराने का विधिक अधिकार प्राप्त होना चाहिए और यह अधिकार याचिका की तिथि पर अस्तित्व में होना चाहिए।

(4) पालन की माँग और इन्कार - इस रिट को जारी करने के निमित्त आवश्यक है कि याचिकादाता ने सम्बन्धित व्यक्ति या प्राधिकारी, इत्यादि से अपने कर्त्तव्य का पालन करने को कहा हो और उस व्यक्ति या प्राधिकारी, इत्यादि ने इन्कार कर दिया हो।[2] यह रिट किसी व्यक्ति, सरकार, अवर या अधीनस्थ न्यायालय, अधिकरण, लोक प्राधिकारी, निगम इत्यादि, जिन पर लोक-कर्त्तव्य का निष्पादन करना आरोपित किया गया है, के विरुद्ध जारी की जा सकती है। यदि कोई कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत निगमित की गई है और उस पर कोई लोक कर्त्तव्य या सांविधिक कर्त्तव्य आरोपित नहीं किया गया है, तो ऐसी कम्पनी के विरुद्ध यह रिट जारी नहीं की जा सकती है।[3]

किसके विरुद्ध जारी नहीं की जा सकती ? राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल के विरुद्ध, उनके पद की शक्तियों के प्रयोग

---

1. डायरेक्टर ऑफ सेट्लमेंट्स बनाम एम० आर० अप्पाराव, AIR 2002.
2. स्टेट ऑफ हरियाणा बनाम चमन लाल, AIR 1976 SC 1654.
3. प्राग टूल्स कारपोरेशन बनाम इमानुएल, AIR 1969 SC 1306.

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

और कर्त्तव्यों के पालन के लिए या उन शक्तियों का प्रयोग और कर्त्तव्यों का पालन करते हुए अपने द्वारा किए गए या किए जाने के लिए तात्पर्यित किसी कार्य के लिए इस रिट को जारी नहीं किया जा सकता। (अनुच्छेद 361)

एक वाद[1] में उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया है कि पुलिस द्वारा एफ० आई० आर० पंजीकृत न करने के विरुद्ध दाखिल याचिका को ग्रहण नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि इसके लिए दण्ड प्रक्रिया संहिता में उपचार अथवा अनुतोष उपलब्ध है

(III) अधिकार-पृच्छा

अधिकार-पृच्छा का शाब्दिक अर्थ है, "किस प्राधिकार से" यदि कोई व्यक्ति किसी सारवान् सार्वजनिक पद को बिना अधिकार के ग्रहण कर लेता है तो इस रिट को जारी करके उससे पूछा जाता है कि किस अधिकार से वह पद धारण किए हुए है जो व्यक्ति बिना किसी अधिकारी या प्राधिकार के पद धारण किए हुए है उसे उस रिट को जारी करके पद से हटाया जा सकता है।[2]

अधिकार-पृच्छा रिट जारी करने के निमित्त निम्नलिखित शर्तों की पूर्ति होनी आवश्यक है—

1. **प्रश्नगत पद की सारवान प्रकृति का लोकपद होना चाहिए—** इस निमित्त आवश्यक है कि यह लोकपद हो और इसके साथ ही यह सारवान् प्रकृति का हो। यदि प्रश्नगत पद प्राइवेट प्रकृति का है तो इसे जारी नहीं किया जा सकता।[3]

1. साकिरी वसु बनाम स्टेट ऑफ यू०पी०, AIR 2008 SC 907.
2. यूनिवर्सिटी ऑफ मैसूर बनाम गोविन्द राव, AIR 1965, SC 491.
3. जमालपुर आर्य समाज सभा बनाम डी० राम, ए० आई० आर० 1954.

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

२. बिना विधिक प्राधिकार के पद धारण किया जाना चाहिए- इस रिट को जारी करने के लिए आवश्यक है कि पद उस व्यक्ति द्वारा धारण किया गया हो जो विधिकरूप में उसे धारण करने के योग्य न हो अथवा उस पद पर उसकी नियुक्ति में किसी सांविधिक उपबन्ध का उल्लंघन हुआ हो।[1] जिससे कि उस पद के लिए उसका हक अविधिमान्य हो गया हो[2] इस रिट को जारी करने के लिए आवश्यक है कि संविधान या किसी संविधि के आज्ञापक उपबन्धों का उल्लंघन हुआ हो[3]।

यदि कोई व्यक्ति किसी लोकपद पर नियुक्त कर दिया जाता है जब तक कि विधिक रूप में उस पद को धारित करने के लिए योग्य नहीं है और इस प्रकार उसके द्वारा पद का धारण किया जाना अवैध है परन्तु याचिका की सुनवाई के समय यह उस पद पर नियुक्त किए जाने के योग्य हो जाता है तो न्यायालय इस रिट को जारी करने से इन्कार कर देता है क्योंकि ऐसी दशा में पद से हटाए जाने के बाद भी उस व्यक्ति को पुनः उस पद पर नियुक्त किया जा सकेगा और इस प्रकार रिट का जारी किया जाना व्यर्थ हो जाएगा[4]।

IV. उत्प्रेषण -

उत्प्रेषण-रिट वह रिट है जो वरिष्ठ न्यायालय द्वारा अधीनस्थ न्यायालय अथवा अधिकरण अथवा न्यायिक या अर्ध न्यायिक कार्य करने वाले निकाय को उसके चलने वाली कार्यवाही और उसमें दिए गए निर्णय को रिट जारी करने वाले न्यायालय को भेजने का निदेश या आदेश देने के निमित्त जारी किया जाता है। यदि ऐसे परीक्षण पर वरिष्ठ न्यायालय

1. यूनिवर्सिटी ऑफ मैसूर बनाम गोविन्द राव, AIR 1965, SC 491.
2. स्टेट ऑफ आसाम बनाम रंगा मोहम्मद, AIR 1967, SC 903.
3. रामचन्द्रन बनाम रामचन्द्रन AIR 1987, मद्रास 207.

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

पाता है कि अधीनस्थ न्यायालय का निर्णय विधिमान्य नहीं है तो वह इसे निष्प्रभावी कर सकता है।

इस रिट का मुख्य उद्देश्य अधीनस्थ न्यायालय, अधिकरण या न्यायिक या अर्ध न्यायिक कार्य करने वाले निकाय को अपनी अधिकारिता के भीतर रखना है ताकि वे बिना अधिकारिता के या अधिकारिता के आधिक्य में कार्य न करें।[1] यह रिट वरिष्ठ न्यायालय द्वारा अपनी पर्यवेक्षणीय अधिकारिता के अन्तर्गत जारी किया जाता है।[2] वरिष्ठ न्यायालय उस दशा में भी अवर या अधीनस्थ न्यायालय, अधिकरण इत्यादि के तथ्य सम्बन्धी निष्कर्ष में हस्तक्षेप कर सकता है जबकि यह सिद्ध कर दिया जाता है कि अवर न्यायालय, अधिकरण इत्यादि ने, निष्कर्ष को अभिलिखित या लेखबद्ध करते समय ग्राह्ययोग्य और तात्विक साक्ष्य को ग्राह्य कर लिया और ऐसे साक्ष्य ने उक्त निष्कर्ष को प्रभावित किया।[3]

जारी करने की शर्तें—(1) इस रिट को जारी करने के लिए यह आवश्यक है कि अवर न्यायालय, अधिकरण इत्यादि ने बिना अधिकारिता के या अधिकारिता के आधिक्य में कार्य करते हुए निर्णय या आदेश अथवा अधिकारिता के दुरुपयोग में निर्णय या आदेश दिया हो।[4]

(2) इस रिट को जारी करने के निमित्त विधि की त्रुटि होनी चाहिए और इसके साथ यह त्रुटि अभिलेख पर स्वतः स्पष्ट होनी चाहिए। अर्थात् इसे साबित करने के लिए किसी जाँच की आवश्यकता न हो। यदि ऐसी भूल को अवर न्यायालय

1. भारत बैंक बनाम इम्प्लाइज ऑफ भारत बैंक (1950)
2. हरि विष्णु बनाम सैयद अहमद, (1950)
3. एम॰ पी॰ जैन, कान्स्टीट्यूशनल लॉ, पृष्ठ 220-221.
4. स्टेट ऑफ यू॰पी॰ बनाम मो॰ नूह, AIR 1958, SC 86.

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

या अधिकरण इत्यादि के आदेश में विद्यमान है तो इस रिट को जारी किया जा सकता है। भले ही उक्त अवर न्यायालय, अधिकरण इत्यादि ने अपनी अधिकारिता के अन्तर्गत रहते हुए निर्णय दिया हो या आदेश पारित किया हो[1] यदि त्रुटि अभिलेख पर स्वतः स्पष्ट नहीं है और इसे साबित करने के लिए जाँच या बहस की आवश्यकता है तो इसे अभिलेख पर स्पष्ट भूल या त्रुटि नहीं माना जा सकता।[2] और ऐसी भूल या त्रुटि को ठीक करने के निमित्त इस रिट को जारी नहीं किया जा सकता।

V. प्रतिषेध- प्रतिषेध और उत्प्रेषण रिट में बहुत अधिक समानता है। दोनों ही वरिष्ठ न्यायालय द्वारा अधीनस्थ न्यायालय अथवा अधिकरण अथवा न्यायिक या अर्ध-न्यायिक कार्य करने वाले निकाय को जारी किए जाते हैं। दोनों ही समान आधारों पर जारी किए जाते हैं। दोनों का उद्देश्य अधीनस्थ न्यायालय अथवा अधिकरण को अपनी अधिकारिता से परे जाने से रोकना है।[3] इन दोनों में दो प्रमुख भेद हैं। दोनों में एक तो भेद यह है कि जब अधीनस्थ न्यायालय या अधिकरण या न्यायिक या अर्ध-न्यायिक कार्य करने वाले निकाय के समक्ष चलने वाली कार्यवाही पूर्ण नहीं होती है अर्थात् निर्णय नहीं दिया गया होता है तो प्रतिषेध रिट जारी किया जाता है और उक्त अधीनस्थ न्यायालय या अधिकरण, इत्यादि को आगे कार्यवाही करने से रोक दिया जाता है।

---

1. यूनियन ऑफ इण्डिया बनाम घोस, AIR 1961, SC 526.
2. मेनका गाँधी बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया, AIR 1978, SC 597.
3. हरि विष्णु कामथ बनाम अहमद इसहाक, AIR 1955, SC 223.

UNITED SECULAR SOCIETY

Scanned by CamScanner

अधिकरण इत्यादि ने निर्णय दे दिया है तो उस निर्णय को रद्द करने के लिए उत्प्रेषण-रिट जारी किया जाता है।[1] प्रतिषेध और उत्प्रेषण दोनों में दूसरा भेद यह है कि उत्प्रेषण अधीनस्थ न्यायालय या अधिकरण, इत्यादि के निर्णय के विरुद्ध जारी किया जाता है जबकि प्रतिषेध अधीनस्थ या अधिकरण, इत्यादि के विरुद्ध होता है। परिणामस्वरूप यदि अधीनस्थ न्यायालय या अधिकरण का अस्तित्व समाप्त हो जाता है तो प्रतिषेध-रिट जारी नहीं किया जा सकता परन्तु उत्प्रेषण-रिट ऐसी दशा में उसके निर्णय को रद्द करने के लिए जारी किया जा सकता है।[2]

इन दो भेदों के अतिरिक्त अन्य बातों में सम्बन्ध में लागू होने वाले नियम एक समान हैं।

UNITED SECULAR SOCIETY

---

1. हरि विष्णु कामथ बनाम अहमद इसहाक, AIR 1955, SC 223.
2. ईस्ट इण्डिया कामर्शियल कं० बनाम कलेक्टर ऑफ कस्टम्स, AIR 1962, SC 1893.

Scanned by CamScanner